पश्चिम बंगाल विधान सभा के प्लेटिनम जयंती समारोहों (1937 से 2012) के समापन समारोह के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी का अभिभाषण

कोलकाता, पश्चिम बंगाल : 06.12.2013

नमस्कार!

मुझे विधान सभा के प्लेटिनम जयंती समारोहों के समापन समारोह में पश्चिम बंगाल विधान सभा के माननीय सदस्यों के बीच उपस्थित होकर गौरव का अनुभव हो रहा है। मैं इस निमंत्रण के लिए इस सभा के माननीय अध्यक्ष का आभार प्रकट करता हूं।

2. मेरे श्रद्धेय पिता, स्वर्गीय कामदा किंकर मुखर्जी 1952 से 1964 तक पश्चिम बंगाल विधान परिषद के सदस्य रहे। मेरे बेटे अभिजीत ने, जो इस समय लोक सभा के सदस्य हैं, अपना राजनीतिक जीवन इस सभा की सदस्यता से शुरू किया था। मैंने, 1969 में पश्चिम बंगाल विधान सभा के सदस्यों द्वारा राज्य सभा के लिए चयन के बाद संसद की भव्य इमारत में प्रवेश किया था। इसके बाद मुझे 1975, 1993 और 1999, तीन अन्य अवसरों पर पश्चिम बंगाल विधान सभा के सदस्यों द्वारा राज्य सभा के लिए चुना गया था। मुझे इस बात की विशेष प्रसन्नता है कि श्री ज्ञान सिंह, सोहनपाल तथा श्री मो. सोहराब, जो 1969 में इस सदन के सदस्य थे, अभी भी इस सदन के सदस्य हैं। मैं उनका अभिनंदन करता हूं तथा उनके अच्छे स्वास्थ्य की कामना करता हूं। मैं पश्चिम बंगाल विधान सभा को इस अवसर पर इस सदन के वरिष्ठ सदस्यों का अभिनंदन करने पर बधाई देता हूं, जो संसदीय परंपराओं के पथ प्रदर्शक हैं।

3. शरत चंद्र बोस, सुभाष चंद्र बोस, वीरेन्द्र नाथ सस्माल, ज्योतिन्द्र मोहन सेनगुप्त, सैयद नौशेर अली, डॉ. विधान चंद्र रॉय, किरण शंकर रे, ख्वाजा नज़ीमुद्दीन, अब्दुल बारी, फज़लुर रहमान, मेजर हसन सुहरावर्दी, हुसेन शहीद सुहरावर्दी, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी, अज़ीजुल हक़, डॉ. प्रफुल्ल चंद्र घोष, प्रफुल्ल चंद्र सेन, सिद्धार्थ शंकर रे, ज्योति बसु, रतन लाल ब्राह्मण, हेमंत बोस, अजय मुखर्जी, डॉ. आशुतोष मुखोपाध्याय, सैयद बदरुदोज़ा, ए.के. फज़लुल हक़, काशीकांत मैत्रा, बिमल चंद्र सिंहा, डॉ. प्रदीप चंद्र चंद्र, ए ंगनी खान चौधरी, बीना भौमिक, गीता मुखर्जी, इला मित्रा तथा बहुत से अन्य प्रख्यात विधायक इस विधानमंडल के सदस्य रहे हैं। मैं बंगाल की इन महान हस्तियों को नमन करता हूं, जिन्होंने आधुनिक इतिहास पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। उन्होंने इसी सदन के माध्यम से बंगाल की जनता की आवाज तथा जज़्बे को अभिव्यक्ति दी है।

4. माननीय सदस्यगण, पश्चिम बंगाल विधान सभा के नाम कई विशिष्ट रिकार्ड हैं। इस सदन के तीन सदस्य, ख्वाजा नज़ीमुद्दीन, हुसैन शहीद सुहरावर्दी तथा बोगरा के मोहम्मद अली बाद में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री बने। इसी प्रकार ज्योति बसु 22 माह तक उप मुख्यमंत्री रहने के बाद 23 वर्षों तक मुख्यमंत्री रहकर देश के सबसे लंबे समय तक सेवारत वाले मुख्यमंत्री हैं। (प्रसंगवश, पंडित जवाहरलाल नेहरू 17 वर्षों तक प्रधानमंत्री रहे तथा श्री करुणानिधि, जो तमिलनाडु विधान सभा/परिषद के 50 वर्षों से सदस्य रहे, 19 वर्षों तक मुख्यमंत्री रहे)

5. यह सुंदर परिसर 1928-30 के दौरान निर्मित हुआ था तथा 9 फरवरी, 1931 से बंगाल विधान परिषद की बैठकें यहां आयेजित होने लगी। इसकी खामोश दीवारें बहुत से ऐतिहासिक घटनाक्रमों की साक्षी हैं। यह प्लेटिनम जयंती समारोह गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट 1935 के तहत, जनवरी, 1937 में पश्चिम बंगाल विधान सभा के पहले चुनावों की याद दिलाता है। इस सभा का पहला सत्र 7 अप्रैल, 1937 को अपराह्न 2.30 बजे काउंसिल हाउस के काउंसिल चैम्बर में शुरू हुआ था।

6. माननीय सदस्यगण, पश्चिम बंगाल विधान सभा का इतिहास भारत में संविधानिक घटनाक्रमों के विकास से अनन्य रूप से जुड़ा हुआ है। कोलकाता हमारे देश में विधायन कार्यों और प्रतिनिधित्वात्मक लोकतंत्र का पालना रहा है। यह कार्य दो स्तरों पर हुआ है—केंद्रीय विधानमंडल, जिसका मुख्यालय, 1911 में दिल्ली में राजधानी के स्थांतरण तक कोलकाता में था तथा बंगाल की प्रादेशिक विधान मंडल।

7. भारत में आधुनिक विधायन प्रक्रिया की शुरुआत 1601 के चार्टर में पाई जा सकती है जिसके द्वारा गवर्नर तथा ईस्ट इंडिया कंपनी को "ऐसे यथोचित कानूनों, संविधनों, आदेशों तथा अध्यादेशों को बनाने, जारी करने तथा तैयार करने" के लिए प्राधिकृत किया गया था जो सरकार को बेहतर ढंग से चलाने के लिए जरूरी और सुविधाजनक लगें। 1726 के चार्टर में पहली बार गवर्नर तथा तीन प्रेजिडेंसियों की काउंसिलों को विधायन की शक्तियां प्रदान की गई थी।

8. 1773 का रेग्युलेटिंग एक्ट का भारत के विधायन इतिहास में विशेष महत्त्व है क्योंकि इससे कंपनी की सरकार पर संसदीय नियंत्रण की शुरुआत हुई। कहा जाता है कि इस एक्ट से भारत के क्षेत्रीय एकीकरण तथा प्रशासनिक केंद्रीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत हुई। इसमें बंगाल की प्रेजिडेंसी को प्रमुखता प्रदान की गई तथा बंगाल के गवर्नर को गवर्नर जनरल नियुक्त किया गया। गवर्नर जनरल की सहायता के लिए चार सदस्यों की एक काउंसिल गठित की गई थी।

9. 1833 के चार्टर अधिनियम ने कंपनी के व्यापारिक अधिकार समाप्त कर दिए तथा इसे भारत में केवल क्राउन की प्रशासनिक एजेंसी बना दिया। इसके बाद बंगाल के गवर्नर जनरल को भारत का गवर्नर जनरल नाम दिया गया तथा उसे संपूर्ण ब्रिटिश भारत पर शासन की शक्ति प्रदान की

गई। पहली बार, गवर्नर जनरल की सरकार को भारत की सरकार तथा उसकी काउंसिल को भारतीय काउंसिल के रूप में जाना गया। इस एक्ट से भारत के संपूर्ण ब्रिटिश क्षेत्र के लिए एक लेजिस्लेटिव काउंसिल गठित की गई तथा कॉउंसिल की विधान-निर्माण बैठकों से इसकी कार्यपालिका बैठकों में अंतर करके संस्थागत विशेषज्ञता की शुरुआत की गई। इस प्रकार राज्य के विधायन कार्यों को पहली बार उसके कार्यकारी कार्यों से अलग किया गया।

10. 1852 में कोलकाता की ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन ने भारत में एक ऐसे विधानमंडल की स्थापना के लिए ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया जिसका लोकप्रिय स्वरूप उस समय की बढ़ती राजनीतिक जागरूकता के अनुरूप हो। संभवत: पहली बार वैधानिक सुधारों के बारे में भारतीय दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हुई थी।

11. 1853 के चार्टर अधिनियम के तहत, काउंसिल की बहसें, जब विधायिका के तौर पर होती, तो लिखित की बजाय मौखिक होने लगी। विधेयकों को तीन सामान्य चरणों में पारित किया जाता था तथा उन्हें प्रवर समितियों को भेजा जाता था। विधायन कार्य गोपनीय के बजाय सार्वजनिक रूप से किए जाते और उनकी कार्यवाहियों की रिपोर्टें अधिकारिक रूप से प्रकाशित होती थी। इन कार्यवाहियों के संचालन और विनियमन के लिए स्थाई आदेश अपनाए गए। नई काउंसिल का मानना था कि उसका दायित्व केवल विधायन तक सीमित नहीं है बल्कि उसने एक ऐसी लघु प्रतिनिधित्वात्मक सभा का स्वरूप ग्रहण करना शुरू कर दिया जो शिकायतों की जांच करने तथा उनका समाधान करने के उद्देश्य से गठित है।

12. 1853 के अधिनियम में विधानमंडल को पहली बार अपने नियम और प्रक्रिया तैयार करने का अधिकार दिया गया। श्री प्रसन्न कुमार टैगोर को काउंसिल के क्लर्क के पद पर नियुक्त किया गया था तथा उन्होंने काउंसिल की प्रक्रिया को संसदीय स्वरूप प्रदान किया और उसे सरकार के एक अलग अंग के रूप में अपनी स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति के लिए प्रोत्साहित किया। जनता को काउंसिल की कार्यवाहियों को देखने की अनुमति थी तथा 1856 में प्रेस को रिपोर्ट की अनुमति प्रदान की गई। परंतु विधायन कार्यों और प्रक्रियाओं की स्थापना के बावजूद काउंसिल में भारतीयों की सहभागिता नहीं थी।

13. गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट 1858 के द्वारा पहली बार काउंसिल में गैर सरकारी सहभागिता शुरू हुई। गवर्नर जनरल को अपनी काउंसिल में 'छह से कम नहीं और बारह से अधिक नहीं' अतिरिक्त सदस्यों को नामित करने का प्राधिकार प्रदान किया गया, जिनमें से कम से कम आधा गैर-सरकारी सदस्य होने चाहिए। 1862 में, वायसराय, लॉर्ड केनिंग ने नवगठित लेजिस्लेटिव काउंसिल में तीन भारतीयों—पटियाला के महाराजा सर नरेंद्र सिंह, बनारस के राजा देव नारायण

सिंह तथा ग्वालियर के राजा दिनकर राव रघुनाथ को नियुक्त किया। 1862 से 1892 के बीच 45 भारतीयों को लेजिस्लेटिव काउंसिल में नामित किया गया था। इनमें से अधिकतर रजवाड़ों के राजकुमार अथवा मुखिया और धनी जमींदार परिवारों से थे। लॉर्ड रिप्पन के वायसरॉय काल के दौरान, इसमें व्यापारी दुर्गा चरण लॉ, इंसपेक्टर ऑफ स्कूल राजा शिव प्रसाद तथा प्रेजिडेंसी मजिस्ट्रेट सैयद अमीर अली को नामित किया गया था। लॉर्ड रिप्पन द्वारा ब्रिटिश इन्डियन एसोसियेशन की सिफारिश पर हिंदू पत्रिका के संपादक, क्रिस्टोदास पाल को और उनकी मृत्यु के बाद प्यारे मोहन मुखर्जी को काउंसिल में नामित किया गया था। 1872-92 के दौरान इस काउंसिल में सैयद अहमद खान, वी एन मांडलिक, के.एल. नौलकर तथा रास बिहारी घोष जैसे बुद्धिजीवियों को नामित किया गया था।

14. परंतु इस प्रकार नामित भारतीय सदस्य परिचर्चाओं में कम रुचि लेते थे तथा पहले से तैयार छोटे-छोटे व्याख्यान पढ़ते थे। वे विनीत बने रहते थे और सरकार का कोई खास विरोध नहीं करते थे। इसी के साथ बहुत से अंग्रेज, काउंसिलों में भारतीयों की सहभागिता का कड़ा विरोध करते थे। 1883 में जारी एक व्यंग्यात्मक पर्चे में तर्क दिया गया था कि, "बंगाली बाबुओं को किसी भी प्रकार को बढ़ावा देने से अंग्रेजी शासन पूरी तरह विलुप्त हो जाएगा तथा खुद पर शासन करने वाला भारत एक ऐसा असफल संसदीय लोकतंत्र सिद्ध होगा जो अव्यवस्था का शिकार बनकर सैनिक तानाशाही के अधीन हो जाएगा।"

15. क्रिमिनल प्रोसिड्योर अमेंडमेंट बिल (1883-84) अथवा इल्बर्ट बिल के पेश होने पर 29 दिसंबर, 1883 को कोलकाता में प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन की पहली बैठक का आयोजन हुआ। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी तथा आनंद मोहन बोस इसके प्रमुख आयोजक थे। बोस ने इस सम्मेलन को राष्ट्रीय भारतीय संसद के गठन की दिशा में पहले चरण के रूप में प्रचारित किया। इस सम्मेलन ने भारत के लोगों की उन्नति के लिए प्रतिनिधित्वात्मक सभाओं की शुरुआत की मांग की। कई मायने में यह राष्ट्रीय सम्मेलन, इन्डियन नेशनल कांग्रेस का पूर्ववर्ती था।

16. 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से उत्तरदायी सरकार के उद्विकास में तेजी आई। अपने पहले ही सत्र में कांग्रेस ने सांविधानिक सुधारों और लेजिस्लेटिव काउंसिल में अधिक चयनित सदस्यों के प्रवेश तथा बजट पर परिचर्चा के अधिकार की मांग करते हुए एक संकल्प पारित किया। कोलकाता में पहले सत्र में अध्यक्षीय भाषण देते हुए, डब्ल्यू.सी. बनर्जी ने कांग्रेस को भारत की राष्ट्रीय सभा बताया।

17. लेजिस्लेटिव काउंसिल में सुधार और उसके विस्तार की मांग प्रत्येक वार्षिक कांग्रेस में की जाती रही तथा यह वर्ष-दर-वर्ष अधिक मुखर होती गई। कांग्रेस काउंसिलों के सुधार को सभी अन्य

सुधारों का मूल मानती थी। इसी दौरान, वायसराय लॉर्ड डुफेरिन ने कांग्रेस के सदस्यों को 'एक सूक्ष्म अल्पसंख्यक' के तौर पर खारिज करते हुए कहा कि सरकार के लोकतांत्रिक तरीकों को अथवा भारत के लिए लोकतांत्रिक प्रणाली को अपनाना अज्ञात की ओर बड़ी छलांग जैसी होगी।

18. इसके उत्तर में, मुंबई में पांचवें कांग्रेस सत्र (1889) के दौरान लेजिस्लेटिव काउंसिल में सुधार के संबंध में एक संकल्प पर बोलते हुए बनर्जी ने कहा, "यदि आप वह पा लेते हैं तो आप सब कुछ पा लेते हैं। इसी पर देश का संपूर्ण भविष्य तथा हमारी प्राशासनिक प्रणाली का भविष्य निर्भर करता है"।

19. 1892 के इन्डियन काउंसिल एक्ट के द्वारा "न तो दस से कम और न ही सोलह से अधिक" अतिरिक्त सदस्यों को शामिल करते हुए लेजिस्लेटिव काउंसिल का विस्तार किया गया। गवर्नर जनरल की लेजिस्लेटिव काउंसिल अथवा जिसे इन्डियन लेजिस्लेटिव काउंसिल कहा जाता था, के लिए पांच और 'अतिरिक्त' सदस्य लाए गए जिसमें से एक-एक सदस्य चारों प्रोविन्सियल काउंसिलों में से प्रत्येक के गैर सरकारी सदस्यों द्वारा तथा एक कलकत्ता चैम्बर ऑफ कॉमर्स द्वारा नामित किया जाना था। यद्यपि 'चुनाव' शब्द को जानबूझकर नजरअंदाज किया गया था परंतु क्योंकि प्रोविंसियल काउंसिलों के गैर-सरकारी सदस्यों द्वारा सेंट्रल काउंसिल के लिए अपने नामितों की सिफारिश तथा चयन किया जाता था। इसलिए यह अप्रत्यक्ष चुनाव के सिद्धांत की अंतर्निहित स्वीकृति की ओर इशारा करता है।

20. वार्षिक बजट को तैयार करने तथा इसे विधानमंडल के समक्ष प्रस्तुत करने की प्रणाली भारत में 1860 में जेम्स विल्सन द्वारा शुरू की गई थी जो ब्रिटिश संसद का सदस्य था और वायसराय की काउंसिल का वित्त सदस्य बनाकर भारत भेजा गया था। पहला बजट 18 फरवरी, 1860 को प्रस्तुत किया गया था। यद्यपि बजट पर सीधे परिचर्चा की अनुमति नहीं दी गई थी परंतु बजट को करारोपण के प्रस्तावों से जोड़कर कभी-कभार इसे संभव बनाया गया था। 1861-62 के दौरान, ऐसे 16 अवसर आए, जब इस तरह से बजट पर चर्चा हुई। काउंसिल को बजट पर मतदान का अधिकार नहीं था।

21. 1892 के एक्ट द्वारा पहली बार सेंट्रल और प्रोविंसियल काउंसिलों को कतिपय शर्तों के अधीन बजट की वित्तीय आलोचना अथवा उस पर चर्चा का अधिकार प्रदान किया गया। परंतु काउंसिल के सदस्यों के पास अभी भी यह शक्ति नहीं थी कि वह किसी वित्तीय परिचर्चा पर किसी संकल्प को प्रस्तुत करें अथवा प्रस्ताव दें अथवा मतदान कराएं।

22. 1892 के एक्ट द्वारा, पहली बार सदस्यों को सरकारी सदस्यों से सवाल पूछने और उनसे पूछताछ करने का अधिकार प्रदान किया गया। पहला प्रश्न 16 फरवरी, 1893 को पूछा गया। पहले

प्रश्नकर्ता भिंगा के महाराजा थे तथा प्रश्न दौरों पर जाने वाले सरकारी अधिकारियों के लिए रसद को इकट्ठा करने की प्रणाली से होने वाली कठिनाइयों से संबंधित था। 1905 और 1906 के दौरान, दो वर्षों में केवल 13 प्रश्न पूछे गए जो सेवाओं, रेलवे, राजस्व तथा विनिमय के बारे में थे। कभी-कभी सूचनाओं को देने से इस आधार पर मना कर दिया जाता था कि इसके लिए कर्मचारियों को बहुत लम्बी तैयारी करनी होगी। (कल्पना करें कि अगर अभी यह स्थिति होती तो अधिकारी कितना प्रसन्न होते)

23. चुने गए सदस्यों के प्रवेश से काउंसिल के जीवन में एक नए युग की शुरुआत हुई। प्रथम चुने गए सदस्य, अनुभवी कांग्रेसी सदस्य सर फीरोजशाह मेहता, स्पष्टवादिता, निर्भीकता तथा जोरदार ढंग से सरकार की नीतियों की आलोचना करते थे। सर फीरोजशाह मेहता को उस शहर को उनके योगदान के लिए 'बॉम्बे का शेर' कहा जाता था तथा एक विधायक के रूप में अपनी भूमिका के कारण 'खूंखार मेहता' कहा जाता था। भारत में राष्ट्रवादी आंदोलन के प्रसार पर रोक लगाने के लिए लॉर्ड लिटन ने देशी भाषा की प्रेस पर सेंसर करने का फैसला किया। फीरोजशाह मेहता ने इस कदम का जोरदार विरोध किया। उनका मानना था कि प्रेस को यथासंभव स्वतंत्र होना चाहिए तथा यह सरकार का बुनियादी दायित्व है कि वह जनता को शिक्षित करे। उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा था, "इंग्लैंड को भारत को अपने स्तर तक ऊंचा उठाना होगा अन्यथा भारत उसे नीचे खींचकर अपने स्तर तक ले आएगा।" एक प्रमुख ब्रिटिश पत्रकार ने सर फीरोजशाह मेहता के जीवन का निचोड़ इन शब्दों में व्यक्त किया था, मेहता, "अकेले ही ब्रिटिश अफसरशाहीके विरुद्ध खड़े रहे हैं, उन्होंने गोखले के समान साहस, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के बराबर वाकपटुता, तथा मोतीलाल घोष की टक्कर की व्यंग्योक्ति का प्रदर्शन किया है।"

24. 1890-1909 के दौरान, सर मेहता के अलावा, इस काउंसिल में गोपालकृष्ण गोखले, आशुतोष मुखर्जी, रास बिहारी घोष, जी.एम. चिटनविस, पी. आनंद चार्लु, बिशंबरनाथ, मुहम्मद रहिमतुल्ला सयानी तथा सलीमुल्ला जैसे पुरोधा थे जिन्होंने राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक मुद्दों पर जनता की शिकायतों को आवाज देने के सीमित मौकों का पूरा फायदा उठाया। गोखले जी, जिन्हें कुछ लोग 'विपक्ष के नेता' कहने लगे थे, अर्थशास्त्र के एक महान विशेषज्ञ थे। उन्होंने सरकार के इस तर्क का खंडन किया कि बजट में बचत अर्थव्यवस्था की अच्छी हालत बताती है और आंकड़ों और तथ्यों के साथ, सेना पर भारी खर्च, भारी करारोपण की नीति, वस्त्र जैसे स्वदेशी उद्योगों पर उत्पाद कर का आरोपण तथा किसानों के लिए सिंचाई सुविधाओं के अभाव के कारण भारत की भयानक तथा बढ़ती गरीबी की दशा का उल्लेख किया।

25. 1892 के अधिनियम की खामियां स्पष्ट थी। काउंसिल में सरकारी सदस्यों का बहुमत बना हुआ था। सरकार किसी भी विधेयक को, भारतीय सदस्यों के विरोध की अनदेखी करते हुए, पारित कर सकती थी। बंगाल के विभाजन के विरुद्ध प्रदर्शन, भयंकर अकाल तथा प्लेग की महामारी, जिसके कारण 1880 के दशक में भारी संख्या में लोग काल के ग्रास बने, जैसी प्राकृतिक आपदाओं आदि के परिणामस्वरूप सरकार द्वारा दमन, बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियों तथा निर्वासन की नीति को अपनाने से रोकने में भारतीय सदस्यों द्वारा की गई कड़ी आलोचना बेकार साबित हुई।

26. 1906 में दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में आयेजित अपने 22वें सत्र में कांग्रेस ने स्वराज को अपना लक्ष्य घोषित किया तथा देश के वित्तीय और कार्यकारी प्रशासन पर नियंत्रण के लिए लेजिस्लेटिव काउंसिलों के तुरंत विस्तार की मांग की। 1909 के इन्डियन काउंसिल एक्ट द्वारा गवर्नर जनरल को एक्जीक्यूटिव काउंसिल में एक भारतीय सदस्य को नामित करने के लिए शक्ति प्रदान की गई, जिसके परिणामस्वरूप पहले भारतीय सदस्य के रूप में श्री सत्येन्द्र प्रसन्नो सिन्हा की नियुक्ति हुई।

27. गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट 1909 में इन्डियन लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्यों की संख्या 16 से बढ़ाकर 60 कर दी गई। चुने गए सदस्यों को नगरपालिकाओं, जिलों तथा स्थानीय बोर्डों, विश्वविद्यालयों, चैम्बर ऑफ कॉमर्स तथा चाय बागान के जमींदारों आदि व्यक्ति समूहों द्वारा चुनकर भेजा जाना था।

28. 1909 के एक्ट से प्रोविन्सियल लेजिस्लेटिव काउंसिलों में गैर सरकारी सदस्यों का बहुमत हुआ परंतु सेन्ट्रल लेजिस्लेटिव काउंसिल में सरकारी सदस्यों का ही बहुमत बना रहा। निर्वाचक मंडल बहुत छोटे-छोटे थे तथा इसमें से सबसे बड़े मंडल में 650 व्यक्ति थे। सेन्ट्रल काउंसिल के कुल 27 चयनित सदस्यों में से केवल 9 सदस्य समग्र रूप से भारत के लोगों का प्रतिनिधित्व करते थे। यह दुखद है कि इसी अधिनियम ने पहली बार भारत में सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को शुरू किया तथा अलग-अलग निर्वाचक वर्ग बनाए।

29. 1909 के अधिनियम में ही पहली बार काउंसिल के सदस्यों को सामान्य जनता के हित के किसी भी मामले पर संकल्प प्रस्तुत करने की तथा उन पर काउंसिल में मत विभाजन की शक्ति प्रदान की गई थी। यह गैर सरकारी संकल्पों की शुरुआत थी। इन नियमों के तहत 25 फरवरी, 1910 को पहला संकल्प गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा दक्षिण अफ्रीका के नाटाल में ठेकेदारी श्रम पर प्रतिबंध की सिफारिश करते हुए प्रस्तुत किया गया था। रॉलेट विधेयक पर पंडित मदन मोहन मालवीय ने ढाई घंटे का वक्तव्य दिया। इसी प्रकार क्षतिपूर्ति विधेयक पर उन्होंने लगातार चार घंटे का वक्तव्य दिया और वे इस विधेयक पर कुल मिलाकर साढ़े छह घंटे तक बोले। यह कभी-कभार

ही होता था कि गैर सरकारी सदस्य अपनी बात मनवा लें। फिर भी उन्होंने संशोधन, संकल्प प्रस्तुत करके तथा प्रश्न पूछकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

30. 1909 में बनाए गए काउंसिल के नियमों से भी बजट पर परिचर्चा का विस्तार हुआ। बजट पर दो चरणों में विचार होता था। प्राथमिक बजट, जिसे वित्तीय विवरण कहा जाता था की प्रस्तुति के बाद सामान्य परिचर्चा होती थी। तथापि सेना पर व्यय जैसी कुछ मदों पर मतदान नहीं होता था।

31. सरकार से सूचना प्राप्त करने के लिए प्रश्न पूछने का अधिकार 1892 में प्रदान किया गया था परंतु अनुपूरक प्रश्न पूछने का अधिकार 1909 तक नहीं दिया गया था। हालांकि गैर सरकारी सदस्य काउंसिल में सरकारी प्रस्तावों को हराने की स्थिति में नहीं थे परंतु वे प्रश्न प्रक्रिया को बहुत गंभीरता से लेते थे। जहां 1911 में केवल 151 प्रश्न और उनके उत्तर हुए थे वहीं 1919 तक यह संख्या बढ़कर 397 हो गई।

32. इन्डियन क्रिमिनल लॉ एमेंडमेंट बिल तथा इन्डियन क्रिमिनल लॉ इमरजेंसी पावर्स बिल नामक दो विधेयक जिन्हें आमतौर पर रॉलेट बिल कहा जाता था, 1919 में काउंसिल में प्रस्तुत किए गए थे जिसके तहत सरकार को क्रांतिकारी राष्ट्रवादी आंदोलनों के दमन के लिए व्यापक शक्तियां दी जानी थी। इनका विधानमंडल के अंदर और बाहर कड़ा तथा लम्बा विरोध हुआ। इस पर आठ घंटों तक परिचर्चा हुई जो दो दिन चली और इसमें 20 गैर सरकारी सदस्यों ने हिस्सा लिया। भारतीय सदस्यों ने न केवल इसकी प्रस्तुति के समय बल्कि हर चरण पर इस विधेयक का विरोध किया।

33. विधेयक के पारित होने के दौरान काउंसिल में 16 बार मत विभाजन हुआ। इन सभी अवसरों पर भारतीय सदस्यों ने पूरी तरह एकजुट होकर मतदान किया। मालवीय तथा सुकुल जैसे कुछ सदस्यों ने विरोधस्वरूप काउंसिल की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया।

34. गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट 1919 से गवर्नर के प्रान्तों के रूप में जाने वाले आठ प्रांतों में 'दोहरी शासन' प्रणाली की शुरुआत हुई। इस प्रणाली ने प्रत्येक प्रांत में सरकार के दोहरे स्वरूप की स्थापना की। सरकार के कुछ क्षेत्रों का नियंत्रण जिसे 'ट्रांसफर्ड लिस्ट' कहा गया, भारत सरकार के मंत्रियों को दिया गया, जो प्रोविंसियल काउंसिल के प्रति जवाबदेह होते थे। इसी के साथ, सरकार के अन्य सभी क्षेत्र (रिजर्व लिस्ट) वायसराय के अधीन रहे। 'रिजर्व लिस्ट' में रक्षा, विदेश मामले तथा संचार शामिल थे। 'टांसफर्ड लिस्ट' में कृषि, स्थानीय सरकारों का पर्यवेक्षण, स्वास्थ्य और शिक्षा शामिल थे।

35. 1919 के एक्ट के तहत इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल का विस्तार करके द्विसदनीय विधानमंडल शुरू किया गया। निम्न सदन को लेजिस्लेटिव एसेंबली कहते थे और जिसमें 144

सदस्य थे। इनमें से 104 चुने हुए और 40 तीन वर्षों के लिए नामित सदस्य थे। उच्च सदन को काउंसिल ऑफ स्टेट्स कहते थे, जिसमें 34 चुने हुए तथा 26 पांच वर्षों के लिए नामित सदस्य थे। 1919 के एक्ट में प्रशासन के विषयों का केंद्रीय तथा प्रांतीय विषयों के रूप में वर्गीकरण किया गया तथा प्रांतीय विषयों के बारे में स्थानीय सरकारों को प्राधिकार प्रदान करने की तथा उन सरकारों को राजस्व तथा दूसरे धन को प्रदान करने की व्यवस्था की गई।

36. जहां तक बंगाल विधानमंडल का प्रश्न है, जैसा कि पहले बताया गया है 1861 के एक्ट में पहली बार विधायन के कार्य में भारतीयों की संबद्धता स्वीकार की गई थी। इसी एक्ट ने भारत में आधुनिक प्रांतीय विद्यालयों की नींव रखी तथा विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया शुरू की। 18 जनवरी, 1862 को अविभाजित बंगाल प्रांत के लिए 12 सदस्यों की लेजिस्लेटिव काउंसिल गठित की गई थी। इन 12 नामित सदस्यों में से 4 भारतीय थे अर्थात् राजा राम मोहन रॉय के पुत्र बाबू रामप्रसाद रॉय, मौलवी अब्दुल लतीफ खान बहादुर; राजा प्रताब चंद सिंह, तथा बाबू प्रसन्न कुमार—टैगोर। इस काउंसिल की प्रथम बैठक 1 फरवरी, 1862 को बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर जॉन पीटर ग्रांट की अध्यक्षता में बेलवेडेर, कोलकाता में उनके आवास पर हुई थी।

37. द इन्डियन काउंसिल्स एक्ट 1892 में बंगाल प्रोविंसियल काउंसिल के सदस्यों की संख्या को बढ़ाकर 20 कर दिया गया। इन्डियन काउंसिल एक्ट 1909 ने सदस्यों की संख्या बढ़ाकर 50 कर दी। गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट 1919 के तहत, बंगाल लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य की संख्या बढ़ाकर 125 कर दी गई, जिसमें से कम से कम 70 प्रतिशत चुने हुए सदस्य थे। काउंसिल की बैठकों का स्थान बदलकर टाउन हॉल, कोलकाता कर दिया गया, जहां यह 1931 तक बना रहा। नवाब सर सेम्युएल हुदा इसके पहले गैर-सरकारी पीठासीन अधिकारी थे।

38. 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट के तहत बंगाल विधानमंडल के दो सदन अर्थात् लेजिस्लेटिव काउंसिल और लेजिस्लेटिव एसेंबली सृजित हुए। एसेंबली में 250 सदस्य थे जबकि काउंसिल में '63 से कम नहीं और 65 से अधिक नहीं' सदस्य होते थे। सर अज़ीज़ुल ह़क बंगाल लेजिस्लेटिव एसेंबली के स्पीकर चुने गए तथा श्री सत्येन्द्र चंद्र मित्रा को 9 अप्रैल, 1937 को काउंसिल का अध्यक्ष चुना गया।

39. मैंने इससे पूर्व सर फीरोजशाह मेहता, श्री गोपाल कृष्ण गोखले तथा पंडित मदन मोहन मालवीय के योगदान का उल्लेख किया है। यह व्याख्यान एस. सत्यमूर्ति, सर तेज बहादुर सप्रू, पंडित मोतीलाल नेहरू, सी.आर. दास, श्रीनिवास शास्त्री आदि जैसे 'स्वराजियों' का उल्लेख किए बिना अधूरा रहेगा। ये नेता काउंसिल की सहायता लेने के बारे में सरकार से असहयोग की कांग्रेस की नीति से असहमत थे। उनका मानना था विधानमंडल के अंदर रहकर कार्य करना भी राष्ट्रवाद

का उद्देश्य पूरा करने में कारगर हथियार सिद्ध हो सकता है। इससे विदेशी शासन की खामियों को प्रचारित किया जा सकता था तथा इसी के साथ संसदीय प्रणाली की बारीकियों पर महारथ हासिल करने की अपनी क्षमता भी अंग्रेजों को दिखाई जा सकती थी।

40. सुप्रसिद्ध अधिवक्ता तथा वक्ता एस. सत्यमूर्ति, 1923 में मद्रास लेजिस्लेटिव एसेंबली में पहुंचे तथा एक विधायक के रूप में उनकी प्रसिद्धि पूरे देश में फैल गई। उन्होंने प्रश्नकाल में महारत हासिल की तथा सवाल-जवाब की कला के महारथी बने। उन्हें 'प्रश्नकाल का आतंक' कहा जाता था। उनके विलक्षण तथा कारगर वक्तव्यों ने उन्हें "रणसिंघे की आवाज" का नाम दिया। जब मद्रास लेजिस्लेटिव काउंसिल के चुनाव का समय आया तो गांधी जी ने कहा कि केवल सत्यमूर्ति को ही विधानमंडल में भेजना काफी होगा। श्री सत्यमूर्ति 1935 से 1939 तक सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेंबली के सदस्य रहे, जहां एक विधायक के रूप में उनकी सफलता पर गांधी जी ने कहा था कि यदि हमारे विधानमंडल में दस सत्यमूर्ति होते तो अंग्रेज काफी पहले चले गए होते।

41. सर तेज बहादुर सप्रू ने महात्मा गांधी के उदय के बाद कांग्रेस से खुलकर संबंध विच्छेद कर लिया, जो अंग्रेजी शासन के खिलाफ अहिंसक सिविल अवज्ञा की वकालत करते थे। सर सप्रू का उन लोगों द्वारा विरोध किया गया जो विधानमंडल को वायसराय की प्रतिनिधिविहीन 'रबड़ की मोहर' मानते थे। तथापि, बहुत से कांग्रेसी राजनीतिज्ञ सर सप्रू को एक प्रख्यात न्यायविद् मानते थे। अंग्रेजों के साथ उनके संबंध उनको मध्यस्थ के तौर पर मूल्यवान बनाते थे तथा सर सप्रू ने गांधी जी और वायसराय लॉर्ड इर्विन के बीच मध्यस्थता करके गांधी-इर्विन करार में सहायता दी थी। सर सप्रू ने गांधी, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर तथा अंग्रेजों के बीच अलग-अलग निर्वाचक वर्गों के विषय में भी मध्यस्थता की थी जिसका समाधान पूना करार के तौर पर हुआ था। सर सप्रू को 1931-1933 के दौरान गोल मेज सम्मेलन में भारतीय उदारवादियों के प्रतिनिधि के रूप में चुना गया था। उनकी अंतिम प्रमुख भूमिका इन्डियन नेशनल आर्मी के गिरफ्तार सैनिकों का बचाव करने के लिए नियुक्त अधिवक्ता के रूप में रही।

42. देशबंधु चितरंजन दास ने बंगाल में स्वराज्य पार्टी के नेता के रूप में एच.एस. सुहरावर्दी, किरन शंकर रॉय तथा तुलसी गोस्वमी आदि की सहायता से अपनी वाक्पटुता तथा संसदीय प्रवीणता से अंग्रेजी शासन की चूलें हिला दीं। इसी समय, पंडित मोतीलाल नेहरू ने सेंट्रल काउंसिल के स्वराज्य पार्टी के नेता के रूप में भारत में सांविधानिक सरकार की बुनियाद डाली। मोतीलाल तथा चितरंजन एक संगठित भारत की तस्वीर पेश करते हुए मुसलमानों को स्वराज्य पार्टी में बनाए रखने में सफल रहे।

43. माननीय सदस्यगण, मैंने इतने विस्तार से कोलकाता में विकसित हुई प्रतिनिधित्वात्मक सरकार के इतिहास पर एक खास मकसद से प्रकाश डाला है। यह इस बात पर जोर देने के लिए है कि पश्चिम बंगाल की जनता का प्रतिनिधि होना एक गौरव तथा बड़े सम्मान की बात है। हमारे देश में प्रतिनिधित्वात्मक सरकार के पालने के तौर पर सर्वोत्तम संसदीय मापदंडों को बनाए रखने और उनको प्रोत्साहन देने में पश्चिम बंगाल विधान सभा की जिम्मेदारी हमारे देश की अन्य संस्थाओं से कहीं अधिक है। इस सभा का यह दायित्व तथा जिम्मेदारी है कि वह शेष देश के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करे।

44. भारत के संविधान में विधान सभा को राज्य में शासन के केंद्र के रूप में रखा गया है तथा इसे सुशासन तथा सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन का बुनियादी उपकरण माना गया है। विधायक के कार्य का समय चौबीस घंटे और सातों दिन होता है। विधायकों को जनता की समस्याओं तथा चिंताओं के प्रति संवेदनशील तथा प्रतिसंवेदी होना चाहिए। उन्हें जनता की शिकायतों को विधानमंडल में उठाते हुए स्वर देना चाहिए तथा जनता और सरकार के बीच कड़ी के रूप में काम करना चाहिए।

45. अनुशासन तथा मर्यादा सदैव बनाए रखनी चाहिए तथा नियमों, परंपराओं तथा शिष्टाचार का पालन करना चाहिए। संसदीय परिपाटियां और प्रक्रियाएं तथा परंपराएं सदन में कार्य के व्यवस्थित तथा तेजी से निपटाने के लिए हैं। असहमति को संसदीय व्यवस्था की सीमाओं और मानदंडों के अंदर शिष्टाचार के साथ जताया जाना चाहिए। लोकतंत्र में तीन कारक बहस, असहमति तथा निर्णय शामिल होने चाहिए न कि 'व्यवधान'।

46. संसदीय प्रणाली के संचालन का बुनियादी सिद्धांत यह है कि बहुमत शासन करेगा और अल्पमत विरोध करेगा, खुलासा करेगा तथा यदि संभव हो तो अपदस्थ करेगा। तथापि, अल्पमत को बहुमत का निर्णय स्वीकार करना होगा और बहुमत को अल्पमत के नजरिए का सम्मान करना होगा।

47. विधायन, धन तथा वित्त के मामलों में अत्यधिक सावधानी की जरूरत है। कार्यपालिका द्वारा बिना विधायिका के अनुमोदन के किसी भी प्रकार का खर्च नहीं किया जा सकता। कोई भी कर बिना विधायिका के द्वारा कानून पारित किए बिना नहीं वसूला जा सकता। बिना विधायिका के अनुमोदन राज्य की समेकित निधि से धन नहीं निकाला जा सकता।

48. यह अफसोस की बात है कि पूरे देश में विधायकों द्वारा विधायन में लगाए जाने वाले समय में धीरे-धीरे कमी आती गई है। उदाहरण के तौर पर 1952-57 के दौरान प्रथम लोकसभा में 677 बैठकें हुईं और 319 विधेयक पारि किए गए थे। इसकी तुलना में 2004-2009 की चौदहवीं लोकसभा में

केवल 322 बैठकें हुई और केवल 247 विधेयक पारित हुए। इसी प्रकार 1952-57 के दौरान प्रथम पश्चिम बंगाल विधान सभा में 326 दिन बैठकें हुई। इसकी तुलना में 2006-2011 की चौदहवीं विधान सभा में केवल 231 दिन बैठकें हुई। वर्तमान पंद्रहवीं विधान सभा में वर्ष 2011 में केवल 33 दिन और 2012 में केवल 41 दिन बैठकें हुई। पीठासीन अधिकारियों के सम्मेलन में हर वर्ष कम से कम 100 बैठकों के आयोजन की जरूरत पर बार-बार जोर दिया गया है। प्रशासन की बढ़ती जटिलताओं को देखते हुए कानून बनाने से पहले समुचित परिचर्चा तथा जांच होनी चाहिए वरना यह अपेक्षित परिणाम देने या अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल नहीं होंगे।

49. मैं इस अवसर पर एक चिंता की बात पर जोर देना चाहूंगा और वह है कुछ राज्यों द्वारा अध्यादेश के माध्यम से कानून बनाने की प्रवृत्ति। सामान्यत: अध्यादेशों को तात्कालिक जरूरतों के मामले में ही प्रख्यापित होना चाहिए। परंतु कुछ राज्य कुछ विवादास्पद कानूनों को अध्यादेशों के द्वारा पारित करते दिखाई देते हैं। इस तरह के अध्यादेशों को सदन का अनुमोदन नहीं होता तथा उन पर विधायकों द्वारा बहस और परिचर्चा नहीं होती। इस प्रकार के अध्यादेशों को स्वाभाविक रूप से समाप्त हो जाना चाहिए, यदि उन्हें विधानसभा का अनुमोदन नहीं प्राप्त होता।

50. माननीय सदस्यगण, हमारे देश के राजनीतिक दलों तथा नेताओं को मिल-बैठकर इस बात पर विचार करने की जरूरत है कि संसद तथा विधानसभाओं की संचालन व्यवधान रहित कैसे हों और क्या इसके लिए कुछ मौजूदा नियमों में संशोधनों की जरूरत है। हमें यह भी पड़ताल करनी चाहिए कि क्या हमारी उपसमितियां विभिन्न मंत्रालयों को बजटीय आबंटनों की अनुमोदनोपरांत जांच कर सकती हैं।

51. प्रत्येक विधायक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सदनों में जो परिचर्चा हो उनका स्तर उच्च होना चाहिए। विभिन्न राजनीतिक दलों के सदस्यों के रूप में विधायकों को अपने-अपने दलों की नीतियों के तहत कार्य करना होगा। परंतु प्रतिस्पर्धात्मक राजनीति के परिणामस्वरूप राज्य की प्रगति धीमी नहीं पड़नी चाहिए या लोगों के कष्टों में वृद्धि नहीं होनी चाहिए। विकास और जनकल्याण के अधिकांश मुद्दे राजनीतिक बाधाओं से ऊपर होते हैं। ऐसे मुद्दों पर सहमति बनाना मुश्किल नहीं होना चाहिए।

52. माननीय सदस्यगण, मैंने हाल ही में अरुणाचल प्रदेश के सुंदर राज्य की यात्रा की और मुझे बताया गया कि केबांग तथा बुलियांग आदि जैसी परंपरागत जनजातीय परिषदों के नेता अपनी बैठकों के आरंभ में कहते हैं, "ग्रामवासियो और भाइयो, आइए हम अपने रीतिरिवाजों को तथा अपनी परिषद को मजबूत करें। हम अपने रिश्तों को बेहतर बनाएं, आइए हम कानूनों को सरल

तथा सभी के लिए समान बनाएं, हमारे कानून एक समान हों, हमारे रीतिरिवाज सभी के लिए समान हों, हम सोच समझकर कार्य करें तथा यह देखें कि न्याय हो तथा सुलह इस तरह हो कि वह दोनों पक्षों को स्वीकार्य हो। हम विवाद की शुरुआत में ही उस पर फैसला लें, कहीं ऐसा न हो कि छोटे-छोटे विवाद बढ़ जाएं तथा बहुत लम्बे समय तक चलते रहें। हम परिषद् की बैठक के लिए इकट्ठा हुए हैं तथा हम एकमत से अपनी राय रखें और अपना फेसला लें। आइए, हम फैसला लें और न्याय करें।" जैसा कि मैंने अरुणाचल प्रदेश विधान सभा में अपने संबोधन में कहा था कि आज के विधायकों को जनजातीय नेताओं की इस बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह पर ध्यान देना चाहिए।

53. सम्माननीय सदस्यगण, पश्चिम बंगाल विधान सभा ने पूर्व में राजनीतिक लोकतंत्र को सशक्त बनाने तथा कानूनों के द्वारा समाजिक परिवर्तन लाने के लिए महत्त्वपूर्ण कारक के रूप में कार्य किया है। भूमि सुधार, शिक्षा, सामाजिक कल्याण, पंचायती राज, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, भ्रष्टाचार उन्मूलन इत्यादि के क्षेत्र में इस सभा द्वारा बनाए गए कानून शेष देश के लिए मॉडल बन गए हैं। इन्हीं कानूनों की बदौलत पश्चिम बंगाल साक्षरता, जनसंख्या नियंत्रण, श्रमिक कल्याण तथा समता बढ़ाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रगति कर रहा है।

54. पश्चिम बंगाल विधान सभा ने, वर्षों के दौरान अनेक प्रगतिशील कानूनों के माध्यम से स्वतंत्रता की वृद्धि में तथा पश्चिम बंगाल के लोगों की समृद्धि को बढ़ाने में योगदान दिया है। परंतु आत्मतुष्टि के लिए कोई स्थान नहीं है। आपको हमेशा लोगों की बढ़ती आकांक्षाओं पर ध्यान देना होगा। यह सदैव ध्यान रखा जाना चाहिए कि जनता हमारी स्वामी है और हममें से हर एक यहां इसलिए मौजूद है क्योंकि हमने उनसे वोट मांगे हैं और उनका समर्थन हासिल किया है।

55. अब समय आ गया है कि राज्य एक बार फिर नवान्वेषी समाधान खोजने तथा सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने के नए तरीकों की खोज में आगे आए। इस विधान सभा के सदस्यों को एकता, संकल्प और दीर्घकालिक परिकल्पना के साथ, लोगों के सम्मुख खड़ी चुनौतियों का सीधा मुकाबला करना होगा। मुझे यकीन है कि पश्चिम बंगाल विधान सभा अपनी उच्च परंपराएं बनाए रखेगी और राज्य को समृद्धि और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ाएगी।

56. अंत में मैं, नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वारा 14 मई, 1935 को वियना में लिखे गए शब्दों को उद्धृत करना चाहूंगा, जिन्हें भारत में प्रत्येक लोकसेवक का ध्येय वाक्य होना चाहिए। नेताजी ने लिखा है, "आइए, हम जीवन और मृत्यु में भारत के एक महान सपूत श्री अरविंदो घोष के द्वारा कहे गए निम्न ध्येय वाक्य को अपने दिल में बसा लें :-मैं आपमें से कुछ को महान बनते देखना चाहूंगा—महान केवल अपने लिए नहीं बल्कि भारत को महान बनाने के लिए—ताकि वह विश्व के स्वतंत्र राष्ट्रों के बीच सिर ऊंचा कर खड़ा हो सके। आपमें से जो लोग निर्धन और अज्ञात हैं—मैं

उनकी निर्धनता तथा अज्ञातता को अपनी मातृभूमि की सेवा में समर्पित देखना चाहूंगा। उसकी समृद्धि के लिए मेहनत करें तथा उसकी खुशी के लिए कष्ट उठाएं।"

57. **जैसा कि गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने कहा है, "बंगाल की भुजा भारत की भुजा को संबल प्रदान करे, बंगाल का संदेश भारत के संदेश को सच्चाई में बदल दे।"**

58. **मैं पश्चिम बंगाल की जनता की शांति, उन्नति तथा समृद्धि की कामना करता हूं।**

धन्यवाद,

जय हिंद!